जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

वस्तुत: बंधन की अनुभूति ही बंधन है।

- बिन्दु में सिंधु, पृष्ठ-12

वर्ष : 25, अंक : 23 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मार्च (प्रथम) 2003 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पण्डित संजीवकुमार गोधा | वार्षिक शुल्क : 25/-, एकप्रति : 2/-

शिलान्यास सानन्द सम्पन्न

कोटा : निर्माणाधीन श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन मुमुक्षु आश्रम की भूमि पर श्री महावीर जिनालय, स्वाध्याय भवन, मानस्तंभ, मुनिसुव्रत कूट, औषधालय एवं अतिथिभवन का शिलान्यास किया गया।

इस अवसर पर दिनांक 14 व 15 फरवरी को दो दिवसीय कार्यक्रम रखा गया, जिसमें प्रथम दिन सम्मेद शिखर विधान के पश्चात् विश्वविख्यात तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के 47 शक्तियों पर मार्मिक प्रवचन हुए। दोपहर में आध्यात्म तलस्पर्शी स्थानीय विद्वान बाबू जुगल किशोरजी 'युगल' कोटा के प्रवचन तथा सायं पहला प्रवचन पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन का एवं दूसरा प्रवचन डॉ. भारिल्ल का हुआ। दूसरे दिन शाम को एक प्रवचन बाल ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री सनावद का तथा डॉ. भारिल्ल का हुआ। इसके अतिरिक्त वहाँ पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अजितकुमारजी शास्त्री अलवर, पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री कोटा आदि विद्वान भी वहाँ पर उपस्थित थे।

अन्तिम दिन भूमिशुद्धि तथा शिलान्यास सभा का उद्घाटन श्रीमान् पदमचन्द प्रेमचन्द बजाज परिवार ने किया। शिलान्यास सभा के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित डॉ. भारिल्ल का प्रसिद्ध प्रवचन करोड़पति रिक्से बाला उदाहरण के माध्यम से 'मैं स्वयं भगवान हूँ' पर हुआ। सभा की अध्यक्षता बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' ने की।

विधि-विधान के कार्य बाल ब्र. अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना तथा सहयोगी पण्डित अनिलकुमारजी 'धवल', एवं पण्डित विपिनकुमारजी शास्त्री ने सम्पन्न कराये।

समस्त कार्यक्रम का निर्देशन ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री एवं डॉ. मानमल जैन ने किया।

शिलान्यास एवं उद्घाटन सम्पन्न

दिल्ली : आत्मसाधना केन्द्र के तत्त्वावधान में श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट द्वारा 13 फरवरी 2003 को रत्नत्रय जिनालय का शिलान्यास श्री अजितप्रसादजी ने किया तथा इसका सम्पूर्ण खर्च भी वे ही उठायेंगे। भवन के स्टेज का उद्घाटन श्री चक्रेश जैन बिजली वालों ने एवं आत्मार्थी औषधालय का उद्घाटन प्रकाशचंद दिनेशकुमार जैन ने किया गया।

इस अवसर पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त महामहोपाध्याय डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के 47 शक्तियों पर मार्मिक प्रवचन हुये।

कार्यक्रम में पण्डित प्रकाशचन्दजी हितैषी दिल्ली, पण्डित राकेशजी शास्त्री लोनी एवं पण्डित संदीपजी शास्त्री की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित गणतन्त्र शास्त्री ने सम्पन्न कराये। कार्यक्रम श्री विमलकुमारजी नीरू केमिकल्स एवं आदीशकुमारजी का भी सराहनीय सहयोग रहा।

मुंबई में धर्म-प्रभावना

मुंबई : निजी कार्य से पहुँचे ब्र. यशपालजी जयपुर के सीमंधर जिनालय में 22 एवं 23 फरवरी को समयसार गाथा 5 के माध्यम से मुनि के स्वरूप के संबंध में दो प्रवचन हुये। मुमुक्षु समाज के विशेष आग्रह पर तीन दिन तत्त्वचर्चा भी हुई, जिसमें लोगों ने करणानुयोग संबंधी चर्चाओं के साथ छठवे व सातवे गुणस्थान पर अनेक शंकायें व्यक्त की जिनका समाधान अच्छी तरह से किया गया।

विशेष बात यह रही कि इस चर्चा में स्वामीजी के कथन के साथ करणानुयोग के मूल विषय का प्रतिपादन किया गया। समाज द्वारा गुणस्थान समझने की इच्छा से अगले माह में 11 से 18 मार्च में आने वाली अष्टान्हिका पर ब्र. यशपालजी को आमंत्रित किया और उन्होनें समाज की रुचि को देखकर स्वीकृति प्रदान की।

आवश्यक सूचना

जिन परीक्षा केन्द्रों ने परीक्षा कराकर अभी तक भी परीक्षा सामग्री उत्तर पुस्तिका आदि परीक्षा बोर्ड कार्यालय, जयपुर को नहीं भिजवाई है, कृपया वे तत्काल भिजवा देवें, ताकि परीक्षाफल तैयार कर प्रमाणपत्र समय पर भेजे जा सकें और आगामी सत्र भी यथासमय प्रारम्भ हो सके।

ज्ञातव्य है कि परीक्षा बोर्ड की शीतकालीन परीक्षायें 24, 25 व 27 जनवरी 2003 को सम्पन्न हो चुकी हैं; अत: संबंधित परीक्षा केन्द्र तुरन्त परीक्षा सामग्री भिजवाने का कष्ट करें।

- प्रबन्धक,
श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड,
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

सम्पादकीय –

हरिवंशपुराण : एक अनुशीलन

25

– रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे .....)

शौर्यपुरी नगरी के राजा समुद्रविजय के ९ लघुभ्राता थे। उनमें आठ भाइयों के नवयौवन आने पर यथासमय विवाह कर दिये गये। अनेक कलाओं में निपुण और गुणों से भरपूर ये आठों भाई और उनकी पत्नियाँ परस्पर बड़े स्नेह से रहती थीं, उनमें बेजोड़ प्रेम था। लघुभ्राता कुमार वसुदेव देवों के समान सर्वगुण सम्पन्न और कामदेवों के समान अतिशय रूपवान, अनेक कलाओं में कुशल, व्यवहार में चतुर चंचल चितवन युक्त, बाल सुलभ क्रीड़ायें करते हुए शौर्यपुरी नगरी में यथेष्ट अपना एवं दूसरों का मनोरंजन करते थे। वे अपने रूप-लावण्य और आकर्षक व्यक्तित्व एवं नाना प्रकार की चतुराई पूर्ण बातों और मन्द-मन्द मुस्कान आदि से हर्ष व्यक्त करने वाले हावभावों से जनता के चित्त को अपनी ओर सहज आकर्षित कर लेते थे। वे जब भी नगर भ्रमण करते, नगर की नारियाँ उनके रूप लावण्य पर सहज ही आकर्षित हो जातीं। वे यदा-कदा रूप बदल कर भी नगर भ्रमण को निकल पड़ते। अतिशय उदार स्वभावी वसुदेव क्रम-क्रम से चार लोकपालों का मनोहर वेष रखकर नगर की चारों दिशाओं में जाते रहते थे। जिनका शरीर सूर्य के समान दैदीप्यमान तथा मुखकमल चन्द्रमा के समान सौम्य था। ऐसे सर्वगुण सम्पन्न वसुदेव जब नगर भ्रमण को निकलते चंचल प्रकृतियों की नारियों में उन्हें देखने की सहज उत्सुकता होती और अपने-अपने हाथ के कामों को छोड़कर और सुध-बुध खोकर जिस हालत में होतीं, उसी हालत में उन्हें देखने के घरों से बाहन निकल पड़तीं, उन्हें कपड़े संभालने तक का भी विवेक नहीं रहता।

यह सब देखकर कुछ वृद्धजनों ने राजा समुद्रविजय के पास जाकर वसुदेव के सम्बन्ध में विनयपूर्वक शिकायत की भाषा में कहा ह्न हे राजन्!..... आप मनुष्यों की रक्षा करते हैं इस कारण 'नृप' नाम सार्थक है, पृथ्वी का पालन करते हैं, इसकारण 'भूप' नाम भी सार्थक है, प्रजा को राजी रखते हैं, इसकारण आप राजा हैं। हे राजन ! आपके राज्य में सब तरह सुकाल है; परन्तु वसुदेव जब भी नगर भ्रमण को निकलते हैं तो इनके रूप लावण्य को देख और कामदेव के समान इनके आकर्षक बाह्य व्यक्तित्व से प्रभावित एवं आकर्षित होकर नगर के अच्छे-अच्छे घरों की नवयुवतियाँ नई-नवेली वधुएँ अपनी सुध-बुध खो बैठती हैं या यों कहे कि वसुदेव उन्हें आकर्षित कर लेते हैं। हे राजन ! यद्यपि कुमार वसुदेव अत्यन्त स्वच्छ हृदय के शील शिरोमणि हैं, उनका कोई दोष नहीं है; परन्तु नगरवासियों का चित्त उद्भ्रान्त हो रहा है, उसके लिए हम क्या करें ? हमने तो अपनी मनोव्यथा कही है। अब जो भी कुमार और नगरवासियों के हित में हो वह करिए। हम तो नगर के प्रतिनिधि के रूप में आपसे निवेदन करने आये हैं।

राजा समुद्रविजय बहुत ही समझदार थे; अत: उन्होंने प्रथम तो नगरवासियों को आश्वस्त कर विदा किया; फिर बुद्धिमानी से वसुदेव को बहुत प्यार से कहा ह्न सर्वप्रथम जब वसुदेव नगर भ्रमण से थके हुए घर लौटे तो उनका आलिंगन किया, स्नेह से सिर पर हाथ फैरते हुए कहा ह्न कुमार ! तुम चिरकाल तक नगर के वन-उपवनों में भ्रमण करने से बहुत थके-थके लग रहे हो। देखो ! तुम्हार चाँद-सा चेहरा मुरझा गया है, तुम्हारा गौरवर्ण श्यामल हो गया है, तुम्हारे वस्त्र धूल-धूसरित होने से और तेज धूप लगने से तुम्हारा कामदेव जैसा स्वरूप कान्तिहीन हो चला है; अत: अब तुम ऐसा नहीं करोगे। अब भविष्य में अपने अन्त:पुर के वृहद् बगीचे में ही क्रीड़ा किया करना।

राजा समुद्रविजय इसप्रकार अपने छोटे भाई वसुदेव को समझाकर तथा उसे अपने साथ अन्त:पुर में ले जाकर शिवादेवी के महल में प्रविष्ट हुए। दोनों ने वहाँ स्नान एवं भोजन किया एवं कुमार वसुदेव को वहीं रहने की व्यवस्था कुछ इसतरह कर दी कि कुमार वसुदेव को ऐसा आभास नहीं होने दिया कि उन्हें किसी प्रतिबन्ध में रखा जा रहा है। कुमार शिवादेवी के बगीचे में नाट्य संगीत आदि विनोद में क्रीड़ा करते हुए रहने लगे।

एक दिन अन्त:पुर की एक कुब्जा दासी शिवादेवी को विलेपन करने के लिए जा रही थी। अपने चपल स्वभाव के अनुसार कुमार वसुदेव ने कुब्जा से छेड़खानी की, उसे तंग किया और उसका विलेप छीन लिया। इससे रुष्ट होकर कुब्जा ने कहा कि कुमार वसुदेव ! तुम्हारी इन्हीं चेष्टाओं के कारण तुम्हें राजा समुद्रविजय ने कैद कर रखा है।

कुब्जा की बात सुनकर शंकाशील होकर वसुदेव ने उससे पूछा कि हे कुब्जे ! तूने यह क्या कहा ? तेरे यह कहने का रहस्य क्या है ? तब कुब्जा ने कुमार को वह सब बात बता दी, जिससे उन्हें अन्त:पुर के बगीचे में ही प्रतिबन्धित किया गया था। कुमार के मन में यह भाव जाग्रत हो गये कि यहाँ रखने में मेरे हित के बहाने मुझे बन्धन में डाल गया है। यह तो मेरे प्रति धोखा किया गया है। बस, फिर क्या था कुमार वसुदेव राजा समुद्रविजय से विमुख हो गया। वह चतुर तो था ही। कोई भी बहाना बनाकर न केवल घर से, बल्कि नगर से भी बाहर निकल गया।

कुमार वसुदेव मंत्रसिद्धि करने हेतु एक नौकर के साथ लेकर रात्रि के समय श्मशान में गया। वहाँ नौकर को एक स्थान पर बैठाकर उससे कहा ह्न 'जब मैं पुकारूँ तो उत्तर देना' ह्न ऐसा कहकर कुछ दूर अकेला एक श्मशान की ओर निकल गया। वहाँ एक मुर्दा को अपने आभूषण पहना कर उसे चिता पर रखकर कुमार वसुदेव ने जोर से कहा ह्न पिता के समान पूज्य राजा और मेरी चुगली करनेवाले नगरवासी अब चिरकाल तक सुख से रहें। मैं अग्नि में प्रविष्ट होकर उनके रास्ते से हट दूर परलोक गमन कर रहा हूँ। यह जोर-जोर से कहकर वहाँ से अन्तर्हित हो दूर देश चला गया।

इस घटना के बाद जब वह नौकर कुमार वसुदेव द्वारा चिता में जल जाने के दृश्य को देखकर नगर में लौटा तो उसने जो देखा और सुना था, वह सब वृतान्त सुनाया। **(क्रमश:)**

कहान-संदेश

धर्मी की मंगल भावना

8

देखो ! यह इष्ट उपदेश ! स्वयं ही ज्ञेय और स्वयं ही ज्ञाता होकर अनुभव कर सके ह्न ऐसी शक्ति का सत्त्व है। ज्ञेय या ज्ञाता होने के लिये अन्य की आवश्यकता हो ऐसी पराधीन वस्तु का स्वरूप ही नहीं है। सर्वज्ञ परमेश्वर ने जैसे आत्मा देखा-जाना वैसा ही कहा है। भगवान यह प्रीतिभोज दे रहे हैं। भाई ! तू हर्षित होकर अपने स्वभाव का विश्वास करके ज्ञान की डोर उसमें बाँध दे। पर में कहीं हर्षित होने जैसा नहीं है। स्वयं अपना स्वरूप समझकर, महिमा लाकर उसमें स्थिर होना ही योग्य है।

स्व-पर को जानने की योग्यता पर्याय की अपनी है, इसलिये उसे जाने तब ज्ञेय उसमें ज्ञात हुए ऐसा निकटता के कारण कहा जाता है। ज्ञान की एकसमय की पर्याय अनन्त द्रव्यों को जानती है और पर्याय में अनन्त द्रव्य ज्ञात होने योग्य हैं - ऐसा कहना भी व्यवहार है। वास्तव में तो ज्ञान की एक समय की पर्याय स्वज्ञेय को-भगवान आत्मा को जाने वहाँ अनन्त परज्ञेय उसमें ज्ञात हो जायें ऐसी उस पर्याय की शक्ति है।

आत्मा स्वभाव से परमात्मस्वरूप है। रागादि तो उसके नहीं हैं; किन्तु अल्पज्ञता भी उसकी नहीं है, वह तो स्वयं सर्वज्ञ परमात्मा प्रभु है। उसके बदले ऐसा माने कि शुभाशुभभाव मेरे हैं, राग तथा दया-दान की क्रियावान मैं हूँ तो उसने परमात्मा को जड़ माना है। परमाणु में होनेवाली क्रियायें जड़ हैं वह ठीक; किन्तु पुद्गल के संग से होनेवाली पुण्य-पाप की क्रिया का भाव भी अचेतन है। उन्हें आत्मा माननेवाले आत्मा को अजीव मान रहे हैं।

इस जीव को बादर, सूक्ष्म, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्यंत कहा तथा पर्याप्त-अपर्याप्त कहा; देह की संज्ञा को जीव संज्ञा कही, वे सब पर की प्रसिद्धि के कारण घी के घड़े की भाँति व्यवहार होने से प्रयोजनभूत नहीं है।

संसार अवस्था है तबतक जीव को राग के साथ तन्मयता है। ऐसा जब तक जीव मानता है तबतक वह मिथ्यादृष्टि है। यदि संसारदशा में भी जीव रागादि के साथ तन्मय हो जाये तो रूपी हो जायेगा; क्योंकि रागादि अचेतन हैं, उन्हें अपना माने तो उसने आत्मा को अचेतन माना है।

अरे ! अशुद्ध परिणति की बात तो कहीं रह गई; किन्तु यहाँ तो ऐसा कहते हैं कि चौथे गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक की जो निर्मलदशा है वह भी जीव की नहीं है, जीव में नहीं है, परन्तु वे सब पुद्गल द्रव्य के परिणाममय हैं। गजब बात कही है आचार्यदेव ने ! त्रैकालिक शुद्ध निर्विकल्प परमतत्त्व की दृष्टिपूर्वक जो अयोगी केवली का गुणस्थान पर्याय में प्रगट हुआ वह भी सब पुद्गल के परिणाममय कहे हैं। क्योंकि यह सभी गुणस्थान जीव की पर्यायस्थिति को बतलाते हैं; त्रैकालिक वस्तुस्वभाव को प्रगट नहीं करते। उनके लक्ष से तो विकल्प उठते हैं, वस्तुस्वभाव का लक्ष चूक जाता है। इसलिये वे जीव के नहीं है। तथा वस्तुस्वभाव की दृष्टि करने पर जो आत्मानुभव होता है उसमें परिपूर्ण त्रैकालिक शुद्ध परमतत्त्व ही मैं हूँ। - ऐसा पर्याय में अनुभव होता है; परन्तु निर्विकल्प वीतरागी परिणति सो मैं हूँ - ऐसा अनुभव नहीं होता। इसप्रकार चौदह गुणस्थान पर्यंत की समस्त अवस्थायें - भेद स्वात्मानुभूति से भिन्न रह जाने से, स्वभाव में उनका अभाव होने से तथा उनके लक्ष से विकल्प उठते हैं, इसलिये वे सब जीव के नहीं हैं, परन्तु पुद्गल द्रव्य के परिणाममय कहे हैं।

मैं ज्ञान-आनन्दादि अनन्त वैभव से भरपूर ज्ञायकतत्त्व हूँ - ऐसा अंतर से भेदज्ञान करे, व्यवहार के जो विकल्प आयें उनसे अपने को भिन्न जाने, गेहूँ और कंकड़ भिन्न करे ऐसे ही भगवान आत्मा को राग से भिन्न करे, तो उसके बल से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होगा। भाई! तेरी वस्तु पुण्य-पाप के विकल्पों से रहित ज्यों की त्यों भीतर पड़ी है। एकबार प्रसन्न होकर देख कि - अहा ! ऐसी वस्तु मैंने कभी दृष्टि में नहीं ली थी। पर्याय के निकट भीतर प्रभु विराजता है वहाँ दृष्टि को मति-श्रुत की पर्याय को ले जा, त्रैकालिक ध्रुव ध्येय बना दे, तो तुझे आत्मा के दर्शन होंगे और तुझे आश्चर्य होगा कि 'ओहो ! यह मैं ? ऐसे आत्मदर्शन के लिये मैंने कभी सच्चा कौतूहल ही नहीं किया'

प्रथम श्रुतज्ञान के सामर्थ्य द्वारा ज्ञानस्वभावी आत्मा का दृढ़ निर्णय करके, अंतर में जहाँ परमात्मस्वरूप प्रभु विराजमान है, मति-श्रुतज्ञान की पर्याय को वहाँ मोड़, उसके सन्मुख कर, ऐसा करने से तुझे सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होगा।

भाई ! प्रथम तो भव का डर होना चाहिये। भवभीरु जीव को ज्ञानी गुरु कहते हैं कि भाई ! तुम्हारी वस्तु पुण्य-पाप के विकल्पों से रहित ऐसी की ऐसी अन्दर विद्यमान है। एकबार प्रसन्न होकर देख कि अहा ! ऐसी वस्तु मैंने कभी दृष्टि में ही नहीं ली। पर्याय के निकट अन्दर प्रभु विराजमान है। वहाँ दृष्टि को मति-श्रुत की पर्याय को ले जा, त्रिकाली ध्रुव को ध्येय बना तो तुझे आत्मा के दर्शन होंगे और विस्मय होगा कि - 'ओहो ! यह मैं ? ऐसे आत्मदर्शन के लिये मैंने कभी भी वास्तविक कुतूहल नहीं किया।'

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

आत्मार्थी छात्र डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के सान्निध्य में रहकर चारों अनुयोगों के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक अध्ययन कर सकें तथा साथ ही संस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि विषयों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकें ह्न इस उद्देश्य से जयपुर में विभिन्न ट्रस्टों के सहयोग से जैनसिद्धान्त महाविद्यालय चल रहे हैं, अभी जिनमें 161 छात्र अध्ययन कर रहे हैं।

अबतक 302 छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके शासकीय एवं अर्द्धशासकीय सेवाओं में रहकर विभिन्न स्थानों में तत्त्वप्रचार की गतिविधियाँ संचालित कर रहे हैं, जिनमें 44 छात्र जैनदर्शनाचार्य की स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रवेश पानेवाले छात्रों को राजस्थान विश्वविद्यालय की जैनदर्शन (तीन वर्षीय शास्त्री स्नातक) कोर्स की परीक्षायें दिलाई जाती हैं, जो बी.ए. के समकक्ष हैं तथा सरकार द्वारा आई. ए. एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्यता प्राप्त हैं। शास्त्री परीक्षा में प्रवेश के पूर्व छात्र को दो वर्ष का राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर का उपाध्याय परीक्षा का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है जो हायर सेकेण्ड्री (12वीं) के समकक्ष है। इसप्रकार कुल 5 वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसके बाद दो वर्ष का जैनदर्शनाचार्य का कोर्स है, जो एम.ए. के समकक्ष है।

उपाध्याय में प्रवेश हेतु किसी भी प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सेकेण्ड्री परीक्षा (कक्षा दसवीं) सामान्य अंग्रेजी, विज्ञान, गणित, हिन्दी और सामाजिक विज्ञान सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

यहाँ डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री के सान्निध्य में छात्रों को निरंतर आध्यात्मिक वातावरण प्राप्त होता है।

आवास एवं भोजन की सुविधा नि:शुल्क रहती है।

आगामी सत्र 15 जून 2003 से प्रारंभ होगा। स्थान अत्यंत सीमित है; अत: प्रवेशार्थी शीघ्र ही निम्नांकित पते से प्रवेशफार्म मंगाकर अपना प्रार्थना-पत्र अंक सूची सहित जयपुर प्रेषित करें। यदि प्रवेश योग्य समझा गया तो उन्हें जयपुर (राज.) में 11 मई से 28 मई 2003 तक होनेवाले ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर में साक्षात्कार हेतु बुलाया जायेगा, जिसमें उन्हें आदि से अन्त तक (18 दिन) रहना अनिवार्य होगा। यदि दसवीं का परीक्षाफल अभी उपलब्ध न हुआ हो तो पूर्व परीक्षाओं की अंक सूची की सत्यप्रतिलिपि के साथ प्रार्थनापत्र भेज सकते हैं। परीक्षा परिणाम प्राप्त होते ही तुरंत भेज दें।

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

प्राचार्य, श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय,

ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.)

फोन - (0141) 2705581, 0707458, फैक्स - 2704127

फैडरेशन की टेबल से -

बीते वर्ष फैडरेशन की शाखाओं द्वारा किये गये विशिष्ट कार्यों का ब्योरा इस कालम के अन्तर्गत प्रकाशित किया जा रहा है। सभी शाखाओं से एतदर्थ वार्षिक रिपोर्ट आमंत्रित है -

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन की गुना शाखा तत्त्वप्रचार-प्रसार की गतिविधियों में अनवरत संलग्न है।

गुना में फैडरेशन शाखा द्वारा अनेक प्रकार की गतिविधियों का आयोजन किया जा रहा है; जिसमें जिनेन्द्र पूजन, विधान, भक्ति, तीर्थयात्रा, आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर, पाठशाला का संचालन, मण्डली द्वारा भजन प्रस्तुति, सत्साहित्य-सृजन, जिला स्तरीय प्रतियोगितायें शामिल हैं।

जनवरी से अक्टूबर 02 तक

शाखा द्वारा श्री वर्द्धमान जिनमंदिर में सामूहिक पूजन एवं पाठशाला का संचालन, प्रत्येक रविवार को सामूहिक भक्ति, साहित्य विक्रय-केन्द्र एवं कैसेट विक्री की व्यवस्था तथा अनेक गोष्ठियों एवं प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।शाखा द्वारा अनेक कार्यक्रमों के साथ एक विशेष बाल संस्कार शिक्षण शिविर का आयोजन, जिला स्तरीय सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता एवं तीर्थ यात्रा का भी आयोजन किया गया।

अष्टपाहुड विधान सानन्द सम्पन्न

नागपुर : श्री महावीर दिगम्बर जैन मंदिर नागपुर में दिनांक 19 जनवरी से 26 जनवरी तक श्री राजमलजी पवैया रचित अष्टपाहुड विधान का आयोजन श्री सुदीपकुमारजी एवं पण्डित राकेशजी शास्त्री परिवार द्वारा किया गया।

कार्यक्रम पण्डित संजयकुमारजी शास्त्री जेवर के विधानाचार्यत्व एवं पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री के निर्देशन में सम्पन्न हुये। प्रतिदिन रात्रि में पाठशाला के बच्चों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये। आयोजन को सफल बनाने में पण्डित स्वप्निल शास्त्री, डॉ. शकुन जैन, सौ. स्वर्णलता जैन, कु. नीतू जैन आदि का विशेष सहयोग रहा।

- मंत्री, अशोक जैन

कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना

श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महा. के भूतपूर्व छात्र पण्डित राजेन्द्रकुमारजी शास्त्री यलिमुन्नोली (कर्नाटक) द्वारा समयसार, छहढाला, मोक्षमार्ग-प्रकाशक आदि विषयों पर प्रवचन एवं अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ विगत 2 माह लगातार धर्मप्रभावना हुई।

कर्नाटक में यलिमुन्नोली, कोन्नूर, तेलेकुण्णी, हावेरी, हुबली, दावणगेरे, तुमकूर, हासन, बैंगलोर, मैसूर, मंडया, कनकगिरि, चामराजनगर, सरगुरू, अडगुरू, होसदुर्ग, सालिग्राम, निद्दूर, बेललूर, होलेनरसिपुरा, कार्कल, औराद्र, बेलगांव एवं बागेवाडी।

महाराष्ट्र में मिरज, कुप्पवाड, दानोली, कौटेसार, हिंगनगांव एवं सिरोल - इसप्रकार करीब 30 स्थानों पर महा. के विद्यार्थी द्वारा पहली बार अभूतपूर्व धर्मप्रभावना हुई। वहाँ के सभी लोगों ने टोडरमल स्मारक की एवं पूज्य गुरुदेवश्री की बहुत प्रशंसा की और आगामी काल में शिविर लगाने का आग्रह व्यक्त किया।

पुस्तक समीक्षा

नाम : 1.जैनकथा संग्रह

प्रकाशक : श्री भारतवर्षीय दिग. जैन साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार समिति ।

मूल्य : 50 रुपये मात्र ।

63 पौराणिक आख्यानों पर आधारित विभिन्न लेखकों द्वारा आधुनिक भाषा में निबद्ध लघुकाय कहानियों का संग्रह पठनीय है। यह ऐतिहासिक एवं पौराणिक महापुरुषों के जीवन की यशोगाथा बतानेवाला वैराग्यप्रेरक ग्रन्थ है।

मंदिरों में प्रथमानुयोग का स्वाध्याय करनेवाले साधर्मियों के लिये यह कृति अत्यन्त उपयोगी रहेगी। ग्रन्थ का बाह्य कलेवर भी आकर्षक है। पुस्तक का सम्पादन पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री ने किया है।

प्राप्ति स्थान – लौकान्तिक, ए-31ए, अनीता कॉलोनी, अम्बेडकर मार्ग, बजाजनगर, जयपुर (राज.) फोन - 2702222

2. अनुभवप्रकाश-प्रवचन – पण्डित दीपचन्दजी कासलीबाल द्वारा विरचित ग्रन्थ पर पूज्य गुरूदेवश्री के प्रवचन हैं। कीमत- 25/-

3. अष्टपाहुड-प्रवचन भाग -1 , कीमत-25/-

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान

श्री दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट सोनगढ़

4. अपराध क्षणभर का (नाटक)

प्रकाशक – अ. भा. जैन युवा फैडरेशन खैरागढ़

एवं कहानस्मृति प्रकाशन सोनगढ़

प्राप्तिस्थान- पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

आगामी प्रकाशन : जिनेन्द्र-अष्टक

पण्डित मधुकर गडेकर नागपुर एवं पण्डित मनोहर मारवडकर नागपुर द्वारा रचित तथा ब्र. यशपालजी जैन जयपुर द्वारा संपादित 'जिनेन्द्र-अष्टक' नामक पूजन पुस्तक का प्रकाशन पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से शीघ्र ही हो रहा है।

मराठी भाषी पूजन साहित्य की कमी को देखते हुये पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट ने मराठी पूजा की बहुलता युक्त पुस्तक प्रकाशित करने का निर्णय लिया है।

इसमें 1. पूजा का स्वरूप, आवश्यकता, कारण, विधि, फल आदि प्रमुख विन्दुओं का विवेचन करने वाली ब्र. यशपालजी जैन की सुंदर प्रस्तावना। 2. मुख्य नित्य-नैमित्तिक पूजाओं के साथ 24 तीर्थंकर, विद्यमान 20 तीर्थंकर, पंचपरमेष्ठी, नवदेवता समुच्चय पूजन आदि अनेक मराठी पूजन। 3. हिन्दी की कुछ विशेष पूजन। 4. अनेक प्रकार के स्तोत्र, आध्यात्मिक पाठ तथा मराठी व हिन्दी साहित्य के अनेक आध्यात्मिक भजन, मराठी भाषा की 4 प्रसिद्ध बारह भावनायें आदि का समावेश है।

श्रावकों के षट् आवश्यकों में एक 'देवपूजा' के प्रथम आवश्यक को करते हुये मराठी भाषी श्रावकों के लिये यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी होगी।

25 या इससे अधिक प्रतियाँ लेने वालों को आर्थिक सहायता दी जावेगी।

आचार्य यतिवृषभ एवं तिलोयपण्णत्ती

यतिवृषभाचार्य अपने युग के यशस्वी आगमज्ञाता विद्वान तथा कर्मप्रवाद नामक आठवे अंग के ज्ञाता थे। जयधवल टीका के निर्देशानुसार आर्यमंक्षु एवं नागहस्ती इन आचार्यों के द्वारा सम्यक्रूप से अध्ययन कर इन्होनें 'कषायपाहुड' पर चूर्णिसूत्र एवं तिलोयपण्णत्ती की रचना की; अत: ये दोनों आचार्य ही इनके गुरु सिद्ध होते हैं।

इनका समय वि. स. 526 से पूर्व सुनिश्चित है। निर्विवादरूप से इनकी दो कृतियाँ मानी जाती हैं -1. चूर्णिसूत्र एवं 2.तिलोयपण्णत्ती।

तिलोयपण्णत्ती-

यह ग्रन्थ नौ महाधिकारों में विभक्त है -

1. सामान्य जगत्स्वरूप – 283 गाथाओं में निबद्ध है तथा इसमें तीन गद्य खण्ड भी हैं, जिनमें 18 महाभाषाएँ एवं 700 क्षुद्र (लघु)भाषाएँ उल्लिखित हैं। राजगृह के विपुल, ऋषि, शैल एवं पाण्डु नाम के 5 शैलों का तथा दृष्टिवाद सूत्र के आधार से त्रिलोक की मोटाई, चौड़ाई और ऊँचाई का निरूपण है।

2. नारकलोक – 367 गाथाओं में निबद्ध नरक लोक का सम्पूर्ण निरूपण वर्णित है।

3. भवनवासलोक – 243 गाथाओं में निबद्ध भवनवासी देवों के प्रासादों में जन्मशाला, आभूषण, सामान्यगृह, कदलीगृह, अभिषेकादि तथा अश्वत्थ, सप्तपर्ण, शाल्मली आदि 10 चैत्य वृक्षों का वर्णन है।

4. मनुष्यलोक – 2961 गाथाओं में निबद्ध मनुष्यलोक का वर्णन करते हुए विजयार्द्ध पर्वत के उत्तर-दक्षिण स्थित नगरियों , भोगभूमि स्थित कल्पवृक्षों, नक्षत्र, मंगलद्रव्य, समवशरण आदि का वर्णन है।

5. तिर्यकलोक – 321 गाथाओं में निबद्ध इसमें जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, धातकीखण्ड, कालोदधिसमुद्र एवं पुष्करवरद्वीप का विस्तार से वर्णन है। इसमें गद्य भाग भी है।

6. व्यंतरलोक – 103 गाथाओं में निबद्ध इसमें व्यंतरों के निवास -क्षेत्र, अधिकार-क्षेत्र, उनके भेद, चिन्ह, उत्सेध, अवधिज्ञान आदि का वर्णन है।

7. ज्योतिर्लोक – 619 गाथाओं में निबद्ध इस महाधिकार में ज्योतिषी देवों का विस्तार से वर्णन है।

8. सुरलोक – 703 गाथाओं में निबद्ध इसमें वैमानिक देवों के निवास-स्थान, आयु, परिवार, शरीर, सुख आदि का विवेचन है।

9. सिद्धलोक – इस महाधिकार में सिद्धों के क्षेत्र, संख्या, अवगाहना, सुख आदि का विस्तार से प्ररूपण किया गया है।

इसप्रकार नौ महाधिकारों में विभक्त होने पर भी इस ग्रन्थ में अतिरिक्त अवान्तर अधिकारों की संख्या 180 तथा चतुर्थ महाधिकार के अवान्तर अधिकारों में प्रत्येक के 16-16 अंतर अधिकार भी हैं।

इसप्रकार भूगोल और खगोल का सर्वांगीण विस्तृत निरूपण करने वाला करणानुयोग का प्रतिपादक यह अलौकिक महान ग्रन्थ है।

- जितेन्द्र वि. राठी शास्त्री

तत्त्वचर्चा

समयसार का सार 62

गतांक से आगे

– डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

भाई ! जिन्हें भोग भोगने का रस है, वे मिथ्यादृष्टि है एवं उन्हें बंध होता ही है; लेकिन उन्हें बंध भोगने की क्रिया से नहीं; अपितु भोगने के भाव से बंध होता है।

जैसाकि इस समयसार कलश पद्यानुवाद में कहा है –

(हरिगीत)

कर्म करना ज्ञानियों को उचित हो सकता नहीं।
फिर भी भोगासक्त जो दुर्भुक्त ही वे जानिये।।
हो भोगने से बंध ना पर भोगने के भाव से।
तो बंध है बस इसलिए निज आतमा में रत रहो।।151।।

यद्यपि भोगने से बंध नहीं होता है, पर भोगने के भाव से तो बंध होता ही है। इसलिए हे जीव ! तू भोगने की भावना क्यों करता है ? अपने आत्मा में रमण क्यों नहीं करता है ? यह तो निश्चित है कि भोगने की क्रिया से बंध नहीं होता है; लेकिन भोगने का जो भाव हुआ, उससे तो बंध होता ही है।

महात्मा गांधी ने स्वराज्य प्राप्ति हेतु असहयोग आंदोलन चलाया। असहयोग आंदोलन के समय जब भी कोई विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न होती तब वे उपवास कर लेते थे। उन्हें जेल में डाल देते थे तो वे जेल में भी उपवास करते थे। अंग्रेज जानते थे कि यदि गांधीजी जेल में ही मर गए तो हिन्दुस्तान में जितने भी अंग्रेज हैं, उनमें से एक भी जिन्दा नहीं बचेगा। वे गांधीजी की लोकप्रियता के बारे में भली–भाँति परिचित थे। इसलिए अंग्रेज उन्हें हर हालत में सुरक्षित रखना चाहते थे। वे जानते थे कि यदि गांधीजी भोजन नहीं करेंगे तो गड़बड़ होगी; तब अंग्रेज उन्हें जबर्दस्ती दूध पिलाते थे; यदि वे पीते नहीं थे तो उनके मुँह में ऐसी नली डालते थे जिससे वह दूध अंदर चला ही जाता था।

यह देखकर अन्य कैदी भी ऐसा ही करने लगे। जब उन्हें बलात् दूध पिलाया जाता तो गटागट पी जाते।

गांधीजी और उन लोगों में बड़ा अंतर है ? गांधीजी को दूध जबर्दस्ती पिला दिया तो उनका उपवास भंग नहीं हुआ; लेकिन जिन्होंने दूध के लिए ही उपवास किया था, उनके और गांधीजी के उद्देश्य में कितना महद् अंतर है।

ज्ञानीजनों को तो भोग की रुचि नहीं है और अज्ञानी को भोग में रुचि है। अज्ञानी 'भोगने से बंध नहीं होता है' – ऐसा कहकर भोगने के भाव कर रहा है, भोगने की मान्यता कर रहा है; इसलिए वह तो बंध को प्राप्त होगा ही होगा।

भोग से बंध नहीं होता; इसलिए तू भोग ! यह उपदेश की भाषा नहीं; अपितु यह वस्तुस्वरूप का प्रतिपादन है कि ज्ञानी जीव जब भोग के काल में होता है, तब भी उसे बंध नहीं होता है।

आगे आचार्य कहते हैं कि ज्ञानीजन भोगते हैं कि नहीं भोगते हैं – यह हम नहीं जानते। इसका अर्थ यह है कि वे भोगों को भोगते नहीं हैं, वे तो भोगों को भुगतते हैं। इसे हम इस कलश पद्यानुवाद से और अधिक स्पष्ट समझ सकते हैं –

(हरिगीत)

जिसे फल की चाह ना वह करे – यह जंचता नहीं।
यदि विवशता वश आ पड़े तो बात ही कुछ और है।।
अकंप ज्ञानस्वभाव में थिर रहे जो वे ज्ञानिजन।
सब कर्म करते या नहीं – यह कौन जाने विज्ञजन।।153।।

जिसने कर्म का फल छोड़ दिया, वह कर्म करता है – ऐसी प्रतीति तो हमें नहीं होती; किन्तु यदि ज्ञानी को ऐसा कर्म अवशता से आ पड़ता है तो भी जो ज्ञानी अपने अकंप परमज्ञानस्वभाव में स्थित हैं, वह ज्ञानी कर्म करता है या नहीं; – यह कौन जानता है ?

इस कलश का भावानुवाद करते हुए पण्डित बनारसीदासजी ने तो ऐसा लिखा है कि –

(सवैया तेईसा)

जे निज पूरब कर्म उदै, सुख भुंजत भोग उदास रहैंगे।
जे दुखमैं न विलाप करैं, निरबैर हियैं तन ताप सहैंगे।।
है जिन्हकै दिढ़ आत्मज्ञान, क्रिया करकैं फल कौ न चहैंगे।
ते सु विचच्छन ग्यायक हैं, तिन्ह कौं करता हम तौ न कहैंगे।।

ज्ञानी भोगों को भोगते हुए भी उदास रहेंगे; अतः हम उन्हें कर्त्ता नहीं कहेंगे अर्थात् वस्तुतः ज्ञानी भोगों के अकर्त्ता हैं। यही कारण है कि ज्ञानी भोगों को नहीं भोगते हैं – ऐसा कहा जाता है; इसलिए उन्हें बंध भी नहीं होता है।

यदि इसका वास्तविक भाव नहीं समझें तो इन बातों को सुनकर अज्ञानी जीव का अनर्थ भी हो सकता है।

समयसार कच्चा पारा है, पच जाय तो भयंकर से भयंकर बीमारी दूर हो जाय और न पचे तो मर जाय।

आयुर्वेद में एक ब्राह्मी बूटी होती है, जो बहुत ही ठण्डी तासीर की होती है। जब शरीर में गर्मी चढ़ जावे, गर्मी चढ़ने से पागलपन हो जावे, हजारों दवाईयाँ खिलायें तो भी उनसे ठीक नहीं हो; तब अन्त में ब्राह्मी बूटी पिलायी जाती है। ब्राह्मी बूटी का प्रभाव ऐसा है कि उससे पागलपन दूर होता ही है। लेकिन इसमें समस्या है कि वह आसानी से पचती नहीं है। जो इसे पीता है, उसे उल्टी हो जाती है और उसके शरीर पर जहाँ भी उल्टी के छींटें पड़ जाय, वहीं कुष्ट रोग हो जाता है। इसलिए ऐसे रोगी को ब्राह्मी बूटी पिलाने की विधि ही अलग है।

बीमार व्यक्ति को नदी की धार में बिठाकर ब्राह्मी बूटी पिलायी जाती है। जिस तरफ पानी की धार हो, उस दिशा में उस रोगी की मुखमुद्रा रखी जाती है। उस व्यक्ति को पानी में गले तक डुबो दिया जाता है। फिर उस व्यक्ति को ब्राह्मी बूटी पिलाई जाती है। यदि पच गई तो बीमारी ठीक हो जाएगी और यदि नहीं पची तो उस पानी के बहाव के साथ उल्टी भी बह जायेगी, उस व्यक्ति के शरीर पर छींटें नहीं पड़ेंगे, वह व्यक्ति बच जाएगा।

यदि उल्टी भी हो गई; तब भी दवाई पेट में जाएगी तो थोड़ी बहुत तो रह ही जाएगी; गले में रह जाएगी, आँत में लगी रह जाएगी, आमाशय में लगी रह जाएगी; जितनी भी वह रह जाएगी, उतना ही वह लाभकारी सिद्ध होगी। ये इतनी खतरनाक औषधि है; फिर भी जब दूसरा कोई इलाज न हो, तब इसे पिलाना ही पड़ता है।

ऐसे ही समयसार ब्राह्मी बूटी है। जब मिथ्यात्व का भयंकर पागलपन हो गया हो तो समयसार की ब्राह्मी बूटी घूँट–घूँटकर पिलाई जाती है; लेकिन यह भी जगत को आसानी से नहीं पचती है।

सम्यग्दृष्टि के भोग निर्जरा हेतु हैं; परोपकार का भाव बंध का कारण है, वह धर्म नहीं है; एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता नहीं है; आजतक किसी ने पर में कुछ किया ही नहीं है; पाप के समान पुण्य भी हेय है; क्या समयसार में प्रतिपादित ये परमसत्य बातें सामान्य लोगों को पचने जैसी हैं। ऐसे ही सैंकड़ो तथ्य हैं, जो जगत के जीवों के गले नहीं उतरते, जैनियों के गले नहीं उतरते, यहाँ तक कि अनेक संतों के गले भी नहीं उतरते।

यहाँ कलश में लिखा है कि महाव्रत पालनेवालों, समिति पालनेवालों के गले नहीं उतरते – ऐसा यह अद्‌भुत सत्य है।

एक तो यह तथ्य गले में उतरता ही नहीं है। अंदर चला भी जाय तो पचता नहीं है।

कोई माता अपने बच्चे को दूध पिलाये और पचे नहीं, तब वह डॉक्टर के पास जाती है। डॉक्टर उससे पूछते हैं कि जब इसे दूध पिलाया जाता है, तब होता क्या है ? तब वह इन तीन में से ही एक उत्तर देती है कि दस्त लग जाते हैं, कब्जियत हो जाती हैं या उल्टी हो जाती है।

जब दस्त लगते हैं, तब वह कम से कम पेट में से तो गुजरती ही है; अतः वह अधिक खतरनाक नहीं है। जब कब्जियत हो जाती है; तब वह पेट में ही ठहर जाती है, निकलती नहीं है – यह भी उतनी अधिक खतरनाक नहीं है। सबसे अधिक घातक उल्टी है; क्योंकि शरीर इसे स्वीकार ही नहीं करता। उसे तुरंत बाहर फेंक देता है।

इसप्रकार अपचन की तीन मुख्य अवस्थाएँ हैं – कब्ज हो जाना, दस्त लग जाना एवं उल्टी हो जाना।

ऐसे ही समयसार नहीं पचता है – इसका अर्थ भी इसप्रकार समझ सकते हैं।

एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता नहीं है, ज्ञानी के भोग निर्जरा के हेतु हैं, पाप के समान पुण्य भी हेय है – इन परमसत्य बातों को सुनते ही कोई व्यक्ति खड़ा हो जाय और कहे कि क्या बकते हो ? तुम देश को बरबाद करोगे। तुम जैसे आदमी हमने नहीं देखे हैं। सबको नपुंसक बनाओगे क्या ? कोई किसी का कर्त्ता नहीं है, धर्त्ता नहीं है – ऐसी बातें करते हो। वैसे ही लोग कुछ काम नहीं करते हैं, आलसी हैं। उसमें भी तुम और आग लगाओगे।

इसप्रकार सभा में ही उठकर यदि अनाप–शनाप बकने लगे तो समझ लेना चाहिए की इन्हें उल्टी हो गई है।

कोई व्यक्ति सभा में तो नहीं बोले; लेकिन यह सत्य सुनते ही उस व्यक्ति का जी मिचलाये; उस दिन तो किसीप्रकार अरुचिपूर्वक सुन ले; पर दूसरे दिन उससे कहें कि 'चलो भैय्या ! प्रवचन सुनने चलें।' तब वह व्यक्ति कहता है कि – 'हमें नहीं जाना है, तुम्ही जाओ, मरो ! क्या ऐसी बातें सुनने के लिए हम वहाँ जाएंगे।' उक्त तथ्य 24 घंटे तो उसके अंतर में रहा; लेकिन आत्मा ने उसे ग्रहण नहीं किया। शरीर ने उसे स्वीकार नहीं किया और पतले दस्तों की तरह वह बह गया।

यदि कोई व्यक्ति कहे कि 'भैय्या ! ये तो बहुत ऊँची बातें हैं।' तो समझ लेना चाहिए की अब इसे कब्जियत हो गई है। इसप्रकार समयसार के अपचन की भी यही तीन अवस्थाएँ होती है।

जिस व्यक्ति के ब्राह्मी बूटी शरीर में जाय एवं शरीर उसे स्वीकार कर ले; न दस्त लगे, न कब्जियत हो, न ही उल्टी हो तो अनिवार्यरूप से उस व्यक्ति का पागलपन दूर होगा ही होगा। इसीप्रकार जो समयसार के इस परमसत्य को स्वीकार करे। जिसे यह सुनकर महिमा आवे और अंतर में ऐसा भाव आये कि कितना अद्‌भुत, अपूर्व सत्य है। इसे सुनकर वह इसका चिंतन–मनन करना शुरू कर दे। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्त्ता–भोक्ता नहीं है और मैं आजतक व्यर्थ में ही विपरीत मान रहा था। आज मुझे सत्य समझ में आया।

यदि ऐसी स्थिति है तो समझ लेना चाहिए कि इस व्यक्ति को समयसार पच गया है। समयसार की ब्राह्मी बूटी पच गई तो अनादिकालीन अज्ञान भी अनिवार्यरूप से नष्ट होगा ही होगा।

ई. सन् 1967 में इन्दौर से पर्यूषण पर्व में प्रवचनार्थ मैं जयपुर आया था। उस वक्त भी मैंने इसी उदाहरण के साथ इस प्रकरण की चर्चा की थी। बड़े दीवानजी के मन्दिर में व्याख्यान कर रहा था और पण्डित चैनसुखदासजी उस सभा के अध्यक्ष थे। मेरे व्याख्यान के संदर्भ में उस दिन तो पंडितजी ने सभा में कुछ नहीं कहा; लेकिन अगले दिन उन्होंने सभा में कहा कि 'कल जो भारिल्ल साहब ने व्याख्यान में कहा था, वह शत–प्रतिशत सत्य है। मैंने ब्राह्मी बूटी के बारे में वैद्य से पूछा तो उन्होंने भी इस बात की पुष्टि की।'

पण्डित चैनसुखदासजी महान विद्वान थे। समाज में उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी। मैं तो उनके सामने बच्चा ही था। वे मेरे दादाजी के उम्र के थे, तब मेरी उम्र 30–32 वर्ष होगी और उनकी 60–65 वर्ष।

सब समझ रहे थे कि पंडितजी की यह बात सुनकर मैं बहुत प्रसन्न होऊँगा; लेकिन मैंने वहाँ एक बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य उजागर किया कि – 'यदि वह वैद्य मना कर देता और कहता कि आयुर्वेद में ऐसा नहीं है। तब क्या होता ? तब ये पंडितजी दूसरे दिन आकर कहते कि मैंने वैद्य से पूछा और वैद्य ने कहा कि ऐसी कोई जड़ी–बूटी नहीं होती है। तब मेरा क्या होता ?

यदि यह उदाहरण गलत भी निकल जाता तो मैं अच्छा वैद्य नहीं हूँ – यह सिद्ध होता; इस उदाहरण से मैंने जो सिद्धान्त प्रतिपादन किया है; क्या वह भी गलत हो जाता ? अरे भाई ! उदाहरण गलत होने पर मैं भले ही अच्छा वैद्य सिद्ध नहीं होता; परन्तु मेरे द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त सही होने से पंडित तो अच्छा ही हूँ, सच्चा ही हूँ।

उदाहरण तो हम कहीं से भी चुनते हैं, हम कोई आयुर्वेद के विद्वान थोड़े ही हैं। जो सुनते हैं, वह उदाहरण में ले लेते हैं। उदाहरण की सत्यता और झूठेपन से सिद्धान्त की असत्यता और सत्यता का नाप नही हो सकता है।'

सम्यग्दृष्टि के भोग निर्जरा हेतु हैं – यह न पचे ऐसा सिद्धान्त है; परंतु यदि इसका वास्तविक अर्थ गम्भीरता से समझें तो इसका रहस्य ख्याल में आए बिना न रहेगा। **(क्रमशः)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

वार्षिकोत्सव सानन्द सम्पन्न

इन्दौर (म. प्र.) : श्री पंच बालयती साधना नगर मंदिर में 19 फरवरी से 23 फरवरी तक श्री 170 तीर्थंकर विधान का आयोजन किया गया। यहाँ पर जयपुर से पधारे पण्डित अशोककुमारजी शास्त्री रायपुर के प्रात: समयसार पर एवं दोपहर में तत्त्वार्थसूत्र पर मार्मिक प्रवचन हुये।

शाम को भक्ति के पश्चात् प्रथम प्रवचन पण्डित गौरवकुमारजी शास्त्री चन्देरी के नियमसार पर तथा द्वितीय प्रवचन पण्डित अशोकजी शास्त्री रायपुर के मोक्षमार्ग प्रकाशक पर हुये।

इसी अवसर पर श्री अजितप्रसादजी दिल्ली द्वारा चांदी के भव्य द्वार का उद्घाटन किया गया। सम्पूर्ण कार्यक्रम पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा के निर्देशन में सानन्द सम्पन्न हुआ।

'लघु कथा लिखो' प्रतियोगिता का आयोजन

अ. भा. जैन युवा फैडरेशन, मौ द्वारा 'लघु कथा लिखो' प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। इस प्रतियोगिता में देश के कोने-कोने से अधिकाधिक साहित्य प्रेमी भाग लेवें।

नियम :

1. कहानी सदाचार या नैतिक शिक्षा से संबंधित विषय पर लिखी जानी चाहिए।
2. कहानी मौलिक व 1000 शब्दों में लिखना आवश्यक है।
3. पुरस्कार राशि क्रमश: 301, 201, 101 एवं सांत्वना पुरस्कार की व्यवस्था भी की गयी है।
4. निर्णायक मंडल का निर्णय सर्वमान्य होगा।
5. सर्व श्रेष्ठ लघुकथाओं को विशिष्ट पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जायेगा।

प्रविष्टियाँ भेजने की अंतिम तारीख 30 अप्रैल 2003 है।

संयोजक- शुद्धात्म प्रकाश शास्त्री
द्वारा- मैसर्स परिणति गारमेन्ट्स, मौ,
जिला- भिण्ड (म. प्र.) पिन- 477222

मार्च माह में आनेवाली 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियाँ

1 मार्च - भगवान वासुपूज्य का जन्म एवं तप कल्याणक
6 मार्च - भगवान अरनाथ का गर्भकल्याणक
8 मार्च - भगवान मल्लिनाथ का मोक्षकल्याणक
11 मार्च - भगवान संभवनाथ का गर्भकल्याणक
21 मार्च - भगवान पार्श्वनाथ का ज्ञानकल्याणक
22 मार्च - भगवान चन्द्रप्रभ का गर्भकल्याणक
25 मार्च - भगवान शीतलनाथ का गर्भकल्याणक
26 मार्च - भगवान ऋषभदेव का जन्म एवं तप कल्याणक

जैनपथप्रदर्शक के स्वामित्व का विवरण
फार्म नं. 4 नियम नं. 8

समाचार पत्र का नाम	:	जैनपथप्रदर्शक (हिन्दी)
प्रकाशन स्थान	:	श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर
प्रकाशन अवधि	:	पाक्षिक
मुद्रक	:	श्री प्रमोदकुमार जैन (भारतीय) जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., एम.आई.रोड, जयपुर
प्रकाशक का नाम	:	ब्र. यशपाल जैन (भारतीय) पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15 (राज.)
सम्पादक का नाम	:	श्री रतनचन्द भारिल्ल (भारतीय) श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15
स्वामित्व	:	पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर -15

मैं ब्र. यशपाल जैन एतद् द्वारा घोषणा करता हूँ कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

प्रकाशक :
दिनांक : 1-3-2003 **ब्र. यशपाल जैन**
ट्रस्टी, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

वाह क्या अनोखा सत्य है, क्या अनोखा तथ्य है। अव्रती और व्रती ज्ञानी के भूमिकानुसार पर्याय में रागांश विद्यमान रहने पर भी, वह उन्हें उपादेय नहीं मानता। उपादेय और विधेय नहीं मानने पर भी, नहीं चाहने पर भी भूमिकानुसार पर्याय में राग आता ही है, टलता नहीं। यह कैसी विचित्र स्थिति है? विचित्र है, पर है।

- चिंतन की गहराइयाँ, पृष्ठ-29

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) **मार्च (प्रथम) 2003**
J.P.C. 3779/**02/2003-05**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा जयपुर**, एम.ए. (जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्मदर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127